विश्वास करने की चुनौती

लूका 18 में यीशु ने एक महत्वपूर्ण प्रश्न पूछा: ''... मनुष्य का पुत्र जब आएगा, तो क्या वह पृथ्वी पर विश्वास पाएगा?'' (आयत 8)।

आज हम घबराहट और बेचैनी के युग में रहते हैं। हम समाचार पत्र, रेडियो या टेलीविज़न को यह सब जाने बिना पढ़ या सुन नहीं सकते। संसार भर में हमें दंगों और क्रान्तियों के समाचार मिलते हैं। लगता है जैसे हर मनुष्य के पास प्रश्न हों, परन्तु उत्तर बहुत कम लोगों के पास। आमतौर पर ''पुराने'' को उसके स्थान पर कुछ भी स्थायी न लाकर फेंक दिया जाता है, जिससे गड़बड़ भरी रिक्तता पैदा हो जाती है।

ऐसे युग में, उन विश्वासों पर आक्रमण होना अपरिहार्य है जो कभी लोगों को प्रिय थे, जिसमें उनका अपना विश्वास भी शामिल है। हमने *परमेश्वर* में विश्वास पर सीधे आक्रमण होते देखे हैं। मनुष्यजाति वहां पर आ पहुंची है जहां अधिकांश लोगों को परमेश्वर की आवश्यकता लगती ही नहीं।

बाइबल में विश्वास पर लगातार हमले हुए हैं। आलोचना करने वालों के आधुनिक स्कूल बाइबल को तब तक काटते-छांटते रहते हैं जब तक कि उसमें से सब कुछ निकल न जाए। वे अलौकिक प्रेरणा की धारणा की हंसी उड़ाते हैं।

यीशु के ईश्वरीय होने पर भी हमले होते रहते हैं। यह कुछ अधिक चालाकी भरे हैं, क्योंकि बहुत से लोग यीशु की केवल मुंह से सुपर-भविष्यवक्ता, सुपर-शिक्षक, सुपर-जीवन, या सुपर-स्टार के रूप में तारीफ़ करते हैं। इतना कुछ कहने और करने के बाद भी ऐसे विचार रखने वाले लोग यीशु मसीह को जीवन के प्रभु के रूप में स्वीकार नहीं करते जिसके कदमों में हर घुटना झुकना है।

इस संदेहवाद का एक व्यावहारिक परिणाम सही या गलत के किसी मापदण्ड पर आक्रमण है। लोगों ने ''परिस्थिति के अनुसार नीतियां'' बना ली हैं। सही या गलत के विषयों पर हम परमेश्वर, बाइबल, या मसीह के निर्णयों पर निर्भर नहीं हैं। मनुष्य ने *स्वयं* को न्यायाधीश बना लिया है, और उसका ''कानून'' केवल ''प्रेम का कानून'' है।

फिर, इस युग में मसीह की बात, कितनी उपयुक्त है! ''मनुष्य का पुत्र जब आएगा, तो क्या वह पृथ्वी पर विश्वास पाएगा?''

इस पाठ में हम एक महत्वपूर्ण प्रश्न पूछना चाहते हैं: ''क्या कोई इक्कीसवीं सदी में परमेश्वर, मसीह, और बाइबल में विश्वास रख *सकता* है?'' मेरा मकसद यह पुष्टि करना है कि विश्वास पुराना नहीं पड़ा है, आज इक्कीसवीं सदी में भी बाइबल की शिक्षाओं में

विश्वास किया जा *सकता* है!

इसे कई प्रकार से दिखाया जा सकता था, परन्तु यह सुझाव देने के लिए कि इक्कीसवीं सदी में विश्वास करना *तर्कसंगत* है, मैं आपका मार्गदर्शन विचार की एक रेखा के साथ करना चाहता हूं। सच्चाई को पूरी तरह से कभी भी केवल तर्क से नहीं जाना जा सकता; और, किसी के मसीही बनने पर परमेश्वर उससे यह अपेक्षा नहीं करता कि वह अपने दिमाग़ को पीछे छोड़ दे।

हमारा अध्ययन एक ज़ंजीर के समान, जो एक दूसरे के साथ जुड़ी हुई कड़ियों की तरह होगा। अध्ययन समाप्त करने के बाद, आप पीछे मुड़कर उन स्पष्ट परिभाषित कड़ियों को देखकर *अपने* विश्वास को परख सकते हैं। हो सकता है कहीं पर आप कहें, ''मैं यहां तक जा सकता हूं, इसके आगे और नहीं।'' आपके ''विश्वास के भागफल'' पर आपका ध्यान दिलाया गया होगा। आप उसके साथ बात करें जिसने आपको यह पुस्तक दी थी; इससे आपको और अध्ययन करने के लिए आधार मिल जाएगा।

आइए, अपने विषय पर ध्यान लगाएं। हम बहुत से विचारों का केवल परिचय ही दे सकते हैं, परन्तु मुझे आशा है कि यह प्रबन्ध सहायक होगा।

यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि परमेश्वर है

भजन संहिता 14:1क कहता है, ''*मूर्ख* ने अपने मन में कहा, कोई परमेश्वर है ही नहीं।'' (भजन संहिता 53:1 भी देखिए।) लेखक यहां समझ की कमी की बात नहीं कर रहा था, बल्कि किसी ऐसे मनुष्य की मूर्खता की बात कर रहा था जो अपने आस पास गवाही के व्यापक प्रमाणों को देखने के लिए अपनी आंखें नहीं खोलता।

भजन संहिता 19:1 में कहा गया है, ''आकाश ईश्वर की महिमा वर्णन कर रहा है; और आकाशमण्डल उसकी हस्तकला को प्रकट कर रहा है।'' रोमियों 1:20 कहता है, ''क्योंकि उसके [परमेश्वर के] अनदेखे गुण, अर्थात उसकी सनातन सामर्थ, और परमेश्वरत्व जगत की सृष्टि के समय से उसके कामों के द्वारा देखने में आते हैं, यहां तक कि वे निरुत्तर हैं।''

हमारे बचपन के दिनों में वक्ता आमतौर पर सीधे से उदाहरण दिया करते थे। वे अपनी घड़ियां निकालकर उन्हें दिखाते हुए, यह ज़ोर देते थे कि जैसे घड़ी किसी घड़ी-साज़ के होने की घोषणा करती है, उसी प्रकार संसार अपने बनाने वाले के होने की घोषणा करता है। इस उदाहरण का प्रयोग इतनी बार हुआ है कि यह घिसा-पिटा सा लगता है, परन्तु है यह उससे अधिक गहरा जितना लोगों को लगता है।

यदि मुझे परमेश्वर के अस्तित्व पर एक लम्बा तर्क तैयार करना हो, तो मैं एक पिरामिड के तीन तल बनाकर आरम्भ करूंगा। मैं आधार तल को (1) *अस्तित्व* का नाम दूंगा। उसके ऊपर का तल (2) *तरतीब,* और सबसे ऊपरी तल होगा (3) *परिकल्पना* अथवा *उद्देश्य*:

परिकल्पना

तरतीब

अस्तित्व

घड़ी के उदाहरण का प्रयोग करते हुए मैं हर एक तल का संक्षिप्त विवरण दूंगा:

अस्तित्व: घड़ी का अस्तित्व है। इसकी उपस्थिति एक वास्तविकता है। यह किसी न किसी तरह अस्तित्व में आई।

तरतीब: न केवल घड़ी का अस्तित्व ही है, बल्कि यह सुव्यवस्थित ढंग से काम भी करती है। यह विभिन्न दांतों, पहियों, स्प्रिंगों, और अन्य पुर्ज़ों से बनी है, जिन्हें इस प्रकार से व्यवस्थित किया गया है कि वे एक इकाई के रूप में काम कर सकें। जब तक सभी पुर्ज़े अच्छी तरह काम करते हैं, यह सही ढंग से और एक ताल में काम करती है।

परिकल्पना: न केवल यह घड़ी अच्छी तरह काम ही करती है बल्कि ऐसा करते हुए यह एक *उद्देश्य* को भी पूरा करती है। जिसने भी इसे बनाया है, उसके मन में इसके लिए एक स्पष्ट कार्य था और यह सामान्यत: उस उद्देश्य को पूरा करती है अर्थात यह समय बताती है।

इसी प्रकार, इस संसार को देखने पर इसके बनाने वाले पर विश्वास करने के लिए तर्क की तीन मुख्य बातें ये हैं: (1) सृष्टि का *अस्तित्व* है। (2) और, यह एक *निश्चित* ढंग से कार्य करती है; हम अपनी घड़ियों को परमेश्वर के विशाल आसमानी टाइमपीसों से मिलाकर ठीक करते हैं। (3) घास की प्रत्येक पत्ती में, प्रत्येक वृक्ष में *परिकल्पना (उद्देश्य)* का पता चलता है।

परमेश्वर के अस्तित्व के विरोध में अति सामान्य तर्क वास्तव में ऊपरी दो तलों के विरोध में हैं: *तरतीब* और *परिकल्पना*। कोई प्रलय, तूफानों, भूकम्पों, या शायद अपने जीवन में व्यक्तिगत दुखांतों की ओर ध्यान दिलाकर निष्कर्ष निकाल सकता है कि परमेश्वर है ही नहीं। तथापि, आवश्यक नहीं कि ऐसा ही हो।[1]

समय हमें विचारों की हर बात को गहराई से जांचने की अनुमति नहीं देता। इसलिए हम पिरामिड के आधार–*अस्तित्व* पर ही ध्यान देंगे।

आइए घड़ी के उदाहरण की ओर लौटें। यदि आपको रास्ते में कोई खराब घड़ी पड़ी हुई मिल जाए? कल्पना कीजिए कि यह घड़ी रुक गई है या शायद बहुत तेज़ चलने लगी है। यह अब सही समय नहीं देती; हो सकता है चलना ही बन्द हो जाए। *क्या इसका अर्थ यह है कि अब कोई घड़ी–साज़ नहीं रहा?* नहीं, प्रमाण अभी भी स्पष्ट है, ख़राब हालत में भी इस घड़ी का *अस्तित्व* है।

यदि इसका अस्तित्व है तो यह आई कहां से?

कहा जाता है कि केवल दो प्रकार के अस्तित्व हैं: मन और पदार्थ। क्योंकि शून्य से

कभी कुछ नहीं निकल सकता, इसलिए अवश्य ही एक अनन्त था जिसने दूसरे को रचा। या तो मन का अस्तित्व हमेशा से है और उसने पदार्थ को बनाया है या पदार्थ हमेशा से अस्तित्व में है और उसने मन को बनाया है। क्योंकि यह तो मानने में आ ही नहीं सकता कि निर्जीव, विचार शून्य, निर्नैतिक पदार्थ-किसी जीवित, विचारवान, भावनात्मक मन को नैतिक विवेक के साथ बना सके, फिर अवश्य ही इसके विपरीत हुआ होगा: अपरिवर्तनीय मन ने ही पदार्थ को बनाया होगा।

मेरे एक मित्र जिम वॉल्डरन ने, इसे इस प्रकार से चित्रित किया। वह पाकिस्तान को जाने वाले एक जहाज़ में बैठा हुआ था और उसके साथ एक रूसी व्यक्ति भी था। वे बातें करने लगे और शीघ्र ही उनकी बातचीत धार्मिक विषयों में बदल गई। रूसी व्यक्ति को यह विश्वास नहीं था कि परमेश्वर ने इस संसार को बनाया है। अन्ततः, जिम ने उससे पूछा, ''रूस में क्या छोटे बच्चे मिट्टी के खिलौने बनाते हैं?'' आदमी मुस्कराया और उसने माना कि रूस में भी छोटे बच्चे मिट्टी के खिलौने बनाते हैं।

जिम ने कहा, ''यह तो बड़ी दिलचस्प बात है। संसार के जिस भाग से मैं आया हूं, वहां भी बच्चे मिट्टी के खिलौने बनाते हैं। असल में, दुनिया में जहां भी मैं गया हूं, हर जगह बच्चे मिट्टी के खिलौने बनाते हैं। परन्तु एक चीज़ मैंने कहीं नहीं देखी: *मैंने मिट्टी के किसी खिलौने को एक छोटा बालक बनाते कभी नहीं देखा।''*

बात एकदम ''मन'' और ''पदार्थ'' के विषय पर आ गई। मन में पदार्थ को चलाने और उसका उपयोग करने की क्षमता है, किन्तु पदार्थ में मन को चलाने की क्षमता नहीं हो सकती। जिम ने मुस्कराते हुए निष्कर्ष निकाला: ''व्यक्तिगत तौर पर मिट्टी के खिलौनों द्वारा बच्चों को बनाने से कहीं अधिक यह विश्वास करना आसान लगता है कि बच्चे मिट्टी के खिलौने बनाते हैं।''

क्योंकि कुछ है, जो हमेशा से था, और वह शून्य से नहीं निकल सकता। क्या यह संसार हमेशा से था या इसे किसी समय बनाया गया?

कुछ वर्ष पूर्व विभिन्न क्षेत्रों से चालीस वैज्ञानिकों के द्वारा लिखित *द ऐविडेंस ऑफ़ गॉड इन ऐन एक्सपैंडिंग यूनिवर्स* पुस्तक पढ़ने में मुझे बड़ा आनन्द आया। मुझे यह बात दिलचस्प लगी कि उनमें से बहुतों ने खोज के अपने विभिन्न क्षेत्रों से यह दिखाने के लिए प्रमाणों का इस्तेमाल किया कि यह संसार ''क्षीण होता'' जा रहा है। इसकी तुलना स्वयं को जलाकर नष्ट करने वाली आग से उस क्षीण होती परत से करने के साथ और कई उदाहरण दिए गए। आप इसे कैसे भी लें, दो सच्चाइयां स्पष्ट हैं: (1) यह संसार सदा तक रहने वाला *नहीं* है, और (2) कहीं पर इसका *आरम्भ* हुआ था।[2]

क्योंकि कुछ शून्य से नहीं निकल सकता, यह पुनः हमें उस शक्ति के पास छोड़ता है जो संसार की जानकारी देने के लिए काफ़ी है। यह अवश्य ही किसी प्रकार का सदा से सदा तक रहने वाला मन है, अन्य शब्दों में वह परमेश्वर है।

अपने चारों ओर देखिए। जिस घर में आप रहते हैं क्या वह यूं ही अस्तित्व में आ गया? इब्रानियों 3:4 इस बात को अच्छी तरह संक्षेप में कहता है: ''क्योंकि हर एक घर का कोई

न कोई बनाने वाला होता है, पर जिसने सब कुछ बनाया वह परमेश्वर है।''[3]

यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि परमेश्वर ने सब कुछ बनाया

हम स्पष्ट चिह्नों की ओर संकेत करते आ रहे हैं कि इस संसार को तरतीब में यह दिखाने के लिए *बनाया* गया है कि यह तर्कसंगत है और इसका कोई *बनाने वाला* है। अब, आइए विचार को घुमाएं और इसे दूसरी तरफ़ से देखें: इस बनाने वाले ने वास्तव में संसार को *बनाया*। यह यूं ही संयोगवश नहीं हो गया। इसे बनाया गया था; इसकी तरतीब दी गई थी; और इसकी *परिकल्पना* की गई थी।

आइए बात की गहराई में जाएं। क्योंकि यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि परमेश्वर ने सब कुछ बनाया, *यह विश्वास करना भी तर्कसंगत है कि परमेश्वर ने मनुष्य को बनाया*– और यह कि परमेश्वर ने *आपको* और *मुझे* बनाया है।

जब मैंने कुछ देर पहले पिरामिड की बात की थी तो मैंने इन ''प्रमाणों'' को स्वयं मनुष्य पर लागू करने से परहेज़ किया था। तथापि, यहां पर मैं मनुष्य को सबसे उत्तम उदाहरण मानता हूं।

परिकल्पना

तरतीब

अस्तित्व

कुछ पल के लिए अपने आप को देखें। मनुष्य की देह के समान कोई भी मशीन नहीं है। इसके हाथ के समान कोई मशीनी यन्त्र नहीं है।[4] इसकी आंख के समान कोई कैमरा नहीं है। इसके हृदय के समान कोई पम्प नहीं है। अपने आप ठण्डा होने वाली, अपने आप चंगा होने वाली इसकी चमड़ी के समान कोई प्रबन्ध नहीं है। इसके आन्तरिक अंगों के समान कोई फैक्ट्री नहीं है। दाऊद के शब्दों में, हम मानते हैं ''मैं भयानक और अद्भुत रीति से रचा गया हूं'' (भजन संहिता 139:14)।

मनुष्य के दिमाग़ को एक उदाहरण के रूप में लें। आज हम कम्प्यूटरों के अद्भुत युग में रहते हैं; परन्तु यदि आप इतना बड़ा कम्प्यूटर बना सकें जो संसार के सबसे बड़े शहर के

प्रत्येक गगनचुंबी भवन को अपने में समा ले, *तौभी* वह उस शक्ति, कौशल, या रचनात्मकता की बराबरी नहीं कर सकता जो एक छोटे बच्चे के दिमाग़ में है!

विकास का सिद्धांत कहता है कि हम जीवन के निम्न रूपों से विकसित हुए हैं। उस सिद्धांत के अनुसार हमने केवल अपने दिमाग़ों को विकसित किया है क्योंकि हम इतने मज़बूत या तेज़ या बड़े नहीं थे कि दूसरे पशुओं के साथ इन तलों पर मुकाबला कर सकते- परन्तु सच्चाई यह है कि जितनी हमारे दिमाग़ में शक्ति है, हमने उसका केवल *बहुत थोड़ा सा प्रतिशत* ही विकसित किया है। मनुष्य की उन्नति का विवरण ''उत्तरजीवन'' का कोई सिद्धांत नहीं है। आसान सी बात यह है कि *परमेश्वर* ने हमें दिमाग़ दिया है; विचारनीय जीव ने हमें विचारनीय जीव होने के लिए बनाया।

मैं फिर दोहराता हूं: यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि परमेश्वर ने मनुष्य को बनाया। यह विश्वास करना और भी अधिक तर्कसंगत है कि हमें वानर-समान पैतृक जीव के स्वरूप के विपरीत परमेश्वर के स्वरूप पर बनाया गया है (उत्पत्ति 1:26)!

यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि परमेश्वर ने मनुष्य को एक प्रकाश दिया

यदि परमेश्वर ने इस संसार को बनाया है तो यह तर्कसंगत है कि वह मनुष्य को यह ज्ञान दे कि वह कहां से आया, वह यहां क्यों है, और जीवन क्या है।

कल्पना कीजिए कि आप एक दिन घर आते हैं और आपके सामने के मैदान में आपको एक बहुत बड़ी, चमकती हुई मशीन का एक टुकड़ा मिलता है। यह जटिल टुकड़ा बड़ी खूबसूरती से, अत्याधुनिक खोजों से बना है; स्पष्ट है कि इसकी परिकल्पना किसी अतिमहत्वपूर्ण कार्य के लिए की गई है। तथापि, इसके उद्देश्य का कोई सुराग नहीं है, निर्देश की कोई पुस्तिका नहीं है, मशीन पर कोई जानकारी अंकित नहीं है। मान लेते हैं कि आपको *कभी भी पता नहीं* चल पाता कि यह सामान किस लिए बनाया गया था। आप सम्भवत: दो निष्कर्षों में से एक पर पहुंचेंगे: (1) या तो बनाने वाला अपने उद्देश्य को प्रकट करने से पहले मर गया, या (2) बनाने वाला पागल था।

अपने आस-पास के संसार को देखकर जो कि मानव निर्मित किसी भी मशीन से अधिक जटिल और पेचीदा है, हम यह निष्कर्ष भी निकाल सकते हैं कि यदि इसके बनाने वाले ने हमें बताने के लिए हम तक यह संदेश नहीं पहुंचाया कि जीवन क्या है तो या तो वह मर चुका है या पागल है। परमेश्वर दोनों में से एक भी नहीं है! इस प्रकार हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि उसने हमें इसके बारे में बताया है। इब्रानियों 1:1, 2 के मुख्य शब्द पूरी तरह से तर्कसंगत हैं: ''... परमेश्वर ने ...बातें कीं ...।''

यदि परमेश्वर ने बताया है या हमारे साथ संचार किया है तो इसका अर्थ हुआ कि कोई *मापदण्ड हैं,* कुछ बातें हैं जो सही या गलत हैं। मनुष्य स्वयं मापदण्ड *नहीं* है। बाइबल कहती है, ''कि मनुष्य का मार्ग उसके वश में नहीं है, मनुष्य चलता तो है, परन्तु उसके डग

उसके अधीन नहीं हैं'' (यिर्मयाह 10:23)।

संचार क्या है? विभिन्न पुस्तकें आज किसी उच्च शक्ति से प्रेरित होने का दावा करती हैं-वे सभी भिन्न-भिन्न विषयों पर दूसरों का खण्डन करती हैं। हमें परमेश्वर के प्रकाश पर ध्यान देना चाहिए। आइए इस विचार को एक कदम और बढ़ाएं: *यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि मनुष्य को दिया गया परमेश्वर का प्रकाश* बाइबल है।

एकता, प्राचीनता, आधुनिकता, ऐतिहासिक तथा भौगोलिक विशुद्धता, निष्पक्षता, प्रभाव, अनश्वरता, पूरी हुई भविष्यवाणी, और अन्य असंख्य प्रमाण बाइबल के परमेश्वर की प्रेरणा से लिखे होने के बारे में बताते हैं। समय सीमा के कारण आइए उसी विचार पर बात करें जिसे हमने पहले आरम्भ किया था। इस पर विचार कीजिए: यदि परमेश्वर ने संसार को बनाया, मनुष्य को संसार में रखा और फिर मनुष्य को अपना प्रकाश दिया, तो क्या यह तर्कसंगत नहीं कि *दिया गया प्रकाश वह होगा जो मनुष्य के लिए परमेश्वर के संसार में जीने के अनुकूल हो?*[5]

समस्त संसार को देखिए। उन देशों की पहचान कीजिए जहां मनुष्य ने बहुत उन्नति की है, जहां मनुष्य की अधिकांश आवश्यकताएं पूरी हो चुकी हैं, मानवीय जीवन अति आदरणीय और सुरक्षित है। आप पाएंगे कि कम से कम, कालान्तर में *बाइबल* ने उन देशों को बहुत प्रभावित किया था।[6]

पौलुस की बातें सारी दुनिया में सत्य प्रमाणित हो चुकी हैं: ''हर एक पवित्र शास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया है और उपदेश, और समझाने, और सुधारने, और धर्म की शिक्षा के लिए लाभदायक है। ताकि परमेश्वर का जन सिद्ध बने, और *हर एक* भले काम के लिए तत्पर हो जाए'' (2 तीमुथियुस 3:16, 17)।

बाइबल अपने आप में यह प्रमाण रखती है कि यह परमेश्वर की प्रेरणा से लिखी गई है। यदि आपको यह विश्वास करने में कोई कठिनाई है कि बाइबल सचमुच परमेश्वर की ओर से है तो मेरा सुझाव है कि आप इसे अवश्य पढ़ें और स्वयं इसके बारे में जानें। पौलुस ने कहा, ''सो विश्वास सुनने से, और सुनना मसीह के वचन से होता है'' (रोमियों 10:17)।

हम बाइबल के *बारे* में बहुत बातें कर सकते हैं, परन्तु हमें यह याद रखना चाहिए कि बाइबल *शक्तिशाली* है। यह ''जीवित, और प्रबल और हर एक दोधारी तलवार से भी बहुत चोखी है'' (इब्रानियों 4:12)। इसने लोगों के जीवनों, देशों, और इतिहास की धारा को बदल दिया है।

यदि आप सचमुच इस अन्तिम प्रमाण के इच्छुक हैं कि बाइबल परमेश्वर की ओर से है तो इसे अपने जीवन में एक अवसर दीजिए। इसे *पढ़िये*। इसका *अध्ययन* कीजिए। (मेरे कहने का भाव है, कि *सचमुच* इसका अध्ययन कीजिए।) इसे अपने जीवन में अपनाएं। आप देखेंगे कि जैसे जे.बी. फिलिप्स ने कहा है कि इसमें ''सच्चाई का घेरा'' है!

यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि परमेश्वर मनुष्य से प्रेम करता है-और उसकी सहायता करने का इच्छुक है

अपने चारों ओर के संसार को देखकर हम इस तथ्य से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते कि परमेश्वर एक *वैयक्तिक* परमेश्वर है, जिसे हमारी हर आवश्यकता की चिन्ता है। चाहे मैं इसे पूरी तरह से नहीं समझ सकता, किन्तु यह स्पष्ट है कि परमेश्वर मुझ से *प्रेम करता* है।

परमेश्वर सोद्देश्य इस संसार को केवल शरीर की ही आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बना सकता था किन्तु उसने इसे ऐसा नहीं बनाया। उसने इसे खूबसूरत बनाया है। उसने फूल बनाए हैं। उसने रंग-बिरंगे पक्षी बनाए हैं। जो कुछ भी उसने बनाया वह ''बहुत ही अच्छा'' (उत्पत्ति 1:31) था।

अदन की वाटिका में परमेश्वर ने हर वृक्ष रखा जो (1) ''*देखने में मनोहर*'' और (2) ''*और जिनके फल खाने में अच्छे*'' (उत्पत्ति 2:9) थे। जब उसने पुरुष के लिए एक ''उपयुक्त सहायक'' बनाया, तो वह उसे मांस का एक ढेर भी बना सकता था जो केवल बच्चे पैदा करने के योग्य हो। परन्तु इसके विपरीत उसने मनुष्य के जीवन की शोभा बढ़ाने के लिए एक खूबसूरत जीव बनाया।

मनुष्य की आवश्यकताओं पर विचार करते हुए आखिर हम नैतिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं पर आते हैं। क्या हर मनुष्य में कभी न कभी आध्यात्मिक लालसाएं नहीं आतीं? क्या कोई व्यक्ति दावे के साथ यह कह सकता है कि वह कभी परमेश्वर के मापदण्डों से नहीं गिरा? क्या प्रत्येक व्यक्ति कभी न कभी अपने आप को असहाय नहीं समझता और अपने से किसी बड़े की आवश्यकता को महसूस नहीं करता? बाइबल कहती है कि यह इसलिए है क्योंकि ''सब ने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित हैं'' (रोमियों 3:23)।

फिर तो, परमेश्वर के प्रेम और चिन्ता को जानते हुए उन आध्यात्मिक प्रबन्धों को पढ़कर जो परमेश्वर ने हमारे लिए किए हैं, हमें कोई आश्चर्य नहीं होता। उसने स्वयं अपने पुत्र यीशु में होकर पाप का दण्ड अपने ऊपर ले लिया, और उसने यीशु के द्वारा निरन्तर आध्यात्मिक सहायता देने का प्रबन्ध किया है। मैं तो कहता हूं कि परमेश्वर के प्रेम के प्रकाश में इस प्रकार के बाइबल के अंश बहुत ही उचित हैं:

> क्योंकि परमेश्वर ने जगत से ऐसा प्रेम रखा कि उसने अपना एकलौता पुत्र दे दिया, ताकि जो कोई उस पर विश्वास करे, वह नाश न हो, परन्तु अनन्त जीवन पाए (यूहन्ना 3:16)।

> ... कि पवित्र शास्त्र के वचन के अनुसार यीशु मसीह हमारे पापों के लिए मर गया। और गाड़ा गया; और पवित्र शास्त्र के अनुसार तीसरे दिन जी भी उठा (1 कुरिन्थियों 15:3, 4)।

सो जब हमारा ऐसा बड़ा महायाजक है जो स्वर्गों से होकर गया है, अर्थात परमेश्वर का पुत्र यीशु ... इसलिए आओ, हम अनुग्रह के सिंहासन के निकट हियाव बांधकर चलें, कि हम पर दया हो, और वह अनुग्रह पाएं, जो आवश्यकता के समय हमारी सहायता करे (इब्रानियों 4:14-16)।

यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि परमेश्वर हमसे उत्तर चाहता है

यद्यपि परमेश्वर ने हमारी आध्यात्मिक भलाई के लिए प्रबन्ध किया है, किन्तु उसने हमें रोबोट के जैसा नहीं बनाया है। उसने जहां हमें आज्ञा मानने के निर्देश दिए हैं, वहीं स्वतन्त्र इच्छा भी दी है। उसने हमें स्वतन्त्र नैतिक कार्य करने वाला बनाया है; हमें अपनी पसन्द चुनने का अधिकार दिया है। हम विश्वास कर सकते हैं और नहीं भी। हम आज्ञा मान सकते हैं और नहीं भी। हम प्रेम कर सकते हैं और घृणा भी।

परमेश्वर ने हमें प्रमाण दिया है कि विश्वास किस आधार पर होना चाहिए। उसने असंख्य ढंगों से अपने प्रेम को व्यक्त किया है। क्या यह अनुचित है कि वह हम से *विश्वास, आज्ञाकारिता* और *प्रेम* के उत्तर की इच्छा रखे ?

- *विश्वास*: इब्रानियों 11:6 कहता है, ''और विश्वास बिना उसे प्रसन्न करना अनहोना है, क्योंकि परमेश्वर के पास आने वाले को विश्वास करना चाहिए, कि वह है; और अपने खोजने वालों को प्रतिफल देता है।''
- *आज्ञाकारिता*: इब्रानियों 5:9 कहता है कि वह ''सिद्ध बनकर, अपने सब आज्ञा मानने वालों के लिए सदा काल के उद्धार का कारण हो गया।''
- *प्रेम*: 1 यूहन्ना 4:8 कहता है कि ''जो प्रेम नहीं रखता, वह परमेश्वर को नहीं जानता, क्योंकि परमेश्वर प्रेम है।''

परमेश्वर ने हमें रोबोट जैसा नहीं बनाया है, क्योंकि रोबोटों का उत्तर मशीनी, स्वचालित, किसी काम का नहीं है। इसके विपरीत, स्वतन्त्र इच्छा रखने वालों के उत्तर का महत्व है।

उस सब पर विचार करें जो परमेश्वर ने हमारे लिए किया, तो यह तर्कसंगत है कि वह हमसे गलतियों 5:6 में दिए संक्षेप उत्तर: ''विश्वास ... प्रेम के द्वारा प्रभाव करता है'' की इच्छा और अपेक्षा करे।

यह चर्चा बहुत लम्बी हो सकती थी, क्योंकि जो उत्तर परमेश्वर चाहता है, उस पर स्पष्ट जानकारी से नया नियम भरा पड़ा है। फिर भी, अभी के लिए आइए अपने विचार की रेखा की एक अन्तिम ''कड़ी'' के साथ इस अध्ययन का समापन करते हैं।

यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि परमेश्वर एक दिन मनुष्य को हिसाब देने के लिए बुलाएगा

हमारे चारों ओर हर जगह ये संकेत मिलते हैं कि यह जीवन ऐसा ही नहीं रहेगा। हर

एक व्यक्ति में नश्वरता की स्वाभाविक चेतना है। जो लोग सच्चे परमेश्वर से बहुत दूर हैं, उनके मन में भी जीवन के बाद की कोई धारणा अवश्य रहती है।[7]

उस जीवन के आने के सम्बन्ध में यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि परमेश्वर हमें उन आशिषों, अवसरों व चुनौतियों का हिसाब देने के लिए बुलाएगा जो हमें इस जीवन में दी गईं तथा हमने उनका उपयोग कैसे किया। हमें बताया गया है, ''फिर यहां भण्डारी में यह बात देखी जाती है कि वह विश्वास योग्य निकले'' (1 कुरिन्थियों 4:2)।

हिसाब देने के उस समय को बाइबल में ''न्याय का दिन'' कहा गया है। इब्रानियों 9:27 कहता है, ''मनुष्य के लिए एक बार मरना और उसके बाद न्याय का होना नियुक्त है।''

मेरा विश्वास है कि न्याय की धारणा तर्कसंगत है। इस जीवन में बहुत बार ''किताबों में हिसाब ठीक नहीं होता।'' दुष्ट आमतौर पर सफल होते हैं और भले लोग उत्पीड़ित होते हैं। दोषी छूट जाते हैं, जबकि निर्दोष दुख उठाते हैं। यकीनन ही, यदि परमेश्वर है तो यह तर्कसंगत है कि एक दिन सभी गलतियां ठीक की जाएंगी और अंकों को न्यायपूर्वक ठीक किया जाएगा।

इसका अर्थ है कि एक दिन *आपको* परमेश्वर के साम्हने उस समय खड़ा होना पड़ेगा जब ''हम में से हर एक परमेश्वर को अपना-अपना लेखा देगा'' (रोमियों 14:12)।

सारांश

विचार की हमारी ज़ंजीर की ''कड़ियां'' ये हैं: यह विश्वास करना तर्कसंगत है ...

- कि परमेश्वर है।
- कि उसने सब कुछ बनाया, विशेषकर मनुष्य को।
- कि उसने मनुष्य को एक प्रकाश दिया और वह प्रकाश बाइबल है।
- कि वह मनुष्य से प्रेम करता है और उसकी सहायता करता है-मसीह के द्वारा *आत्मिक* रूप से।
- कि वह एक उत्तर की इच्छा रखता और अपेक्षा करता है।
- कि अन्त में मनुष्य को उस सब का हिसाब देने के लिए बुलाया जाएगा कि उसने अपनी शारीरिक और आध्यात्मिक आशिषों और अवसरों का उपयोग कैसे किया।

आपने उस दिन की तैयारी के लिए हाल ही में क्या किया?

इस पाठ को समाप्त करते हुए आइए यीशु के प्रश्न की ओर लौटें: ''मनुष्य का पुत्र जब आएगा, तो क्या वह पृथ्वी पर विश्वास पाएगा?'' आइए, इस प्रश्न को और व्यक्तिगत बनाएं: ''मनुष्य का पुत्र जब आएगा, तो क्या वह *आप* में विश्वास पाएगा?'' आखिर यह *आपसे* किए गए प्रश्न का अति महत्वपूर्ण पहलू है।

आप अपने आपको उस मनुष्य जैसा देख सकते हैं जो पुकार उठा, ''हे प्रभु, मैं

विश्वास करता हूं, मेरे अविश्वास का उपाय कर'' (मरकुस 9:24)। यदि आपके विश्वास में कमी है तो वह केवल अव्यावहारिक है अथवा प्रभु को आपके द्वारा अपना जीवन समर्पित करने के लिए अपर्याप्त है। मैं आपसे बाइबल को पढ़ने, उसका अध्ययन करने, और उसकी आज्ञा मानने का आग्रह करता हूं ताकि जब प्रभु आए तो वह आपको विश्वास में पाए जो प्रेम के द्वारा कार्य करता है!

पाद टिप्पणियां

[1]हमारे संसार की तरतीब और परिकल्पना *मुख्यत:* एक है। हमें तो ''बुराई की समस्या'' से दो-चार होना पड़ता है, परन्तु अविश्वासी के लिए इससे भी बड़ी चुनौती है: ''*भलाई* की चुनौती'' की व्याख्या देना। [2]मैं महसूस करता हूं कि संसार की अपने आप को समय-समय पर परिवर्तन के लिए ''चक्र'' थ्यौरी है, परन्तु अभी यह थ्यौरी बिना समर्थन के है जो कि विज्ञान के ज्ञात तथ्यों के विपरीत है। [3]विचार की इस आकर्षक रेखा पर गहन चर्चा की समय अनुमति नहीं देता। *द ऐविडैन्स ऑफ़ गॉड* के लेखकों में से एक ने टिप्पणी की कि सब कुछ बनाया गया है, हमारी समझ में स्वाभाविक ही आ जाता है, हमें सिखाया नहीं जाता। हर बच्चे के मन में प्रश्न होता है, कि ''वह कहां से आया? उसे किसने बनाया?'' [4]मैंने हाल ही में एक टेलीविज़न कार्यक्रम देखा जिसमें लाखों डॉलर मूल्य का एक यन्त्र दिखाया गया था। इसे चलाने के लिए ट्रेनिंग और बहुत सा अनुभव चाहिए था, जबकि इसका केवल एक ही उद्देश्य था: रेडियोएक्टिव सामान के नाजुक डिब्बों को उठाना और ले जाना। अन्य शब्दों में यह मनुष्य के हाथ की योग्यताओं में से *एक* को पूरा कर सकता था। [5]बाइबल हमें बताती है कि यह संसार केवल अनन्तकाल के मार्ग में आने वाला ठहराव-स्थल है; परन्तु यह तथ्य फिर भी कायम है कि *यहां रहते समय* बाइबल हमें ''समृद्ध जीवन'' देती है। [6]इनमें से बहुत से देशों में बाइबल का अधिक प्रभाव नहीं रहा। तथापि, क्योंकि आरम्भिक दिनों में जब जीवन सम्बन्धी दर्शन बनाए गए और राष्ट्रीय निर्देश तय किए गए थे, तब बाइबल यहां प्रभावशाली थी, यह बात अभी भी सत्य है। [7]उनके बारे में विचार कीजिए, जो मृतकों के लिए अगले जीवन में उपयोग के लिए भोजन और अन्य वस्तुएं कब्रों पर रखते हैं।